डॉ. हाइंस वेर्नर वेसलर

१९६२ में जर्मनी के डसलडर्फ़ शहर में जन्म। बॉन विश्वविद्यालय से एम.ए. तथा डीलिट, स्विटजरलैंड के सूरीश विश्वविद्यालय से संस्कृत में पीएचडी की उपाधि प्राप्ति की। हिंदी साहित्य में पोस्ट डॉक्। कुछ समय पत्रकारिता में सक्रिय रहे एवं अंतर्राष्ट्रीय रेडक्रॉस सोसायटी के लिये भी काम किया। हबीब तनवीर के नाटक 'आगरा बाजार' एवं उदयप्रकाश का उपन्यास 'पीली छतरी वाली लड़की' का जर्मन में अनुवाद प्रकाशित। विश्व हिंदी सम्मान-२०१५ से सम्मानित। सम्प्रति : उप्साला, स्वीडन में इंडोलॉजी के प्राचार्य।

सम्पर्क : heinzwerner.wessler@gmail.com

श्रद्धांजलि

विष्णु खरे : हिंदी का खरा कवि

विष्णु खरे (९.२.१९४०-१९.९.२०१८) आलोचक थे, लेख लिखते थे, अनुवादक थे, कवि थे, फिल्म समीक्षक थे, संपादक थे, लेक्चरर भी थे, बहुत कुछ थे, आलोचना में कट्टरपंथी थे, उदारवादी भी थे। मैं व्यक्तिगत रूप से जानता हूँ कि तसल्ली देने में सचमुच अच्छे थे। कई लोगों को इनके ई-मेल्स से और इनसे मिलने से सच्चा प्रोत्साहन मिला। 'लिखो, और लिखते रहो।' यही इनका कहना था। लेकिन जब किसी फलाना लेखक की लिखाई पसंद नहीं करते तो उसको 'गधा' तक कहने से नहीं चूकते थे। लेखक प्रसिद्ध हो या नहीं, विष्णु छोटा-बड़ा का फर्क नहीं मानते थे। सीधी-साधी बातें ही उनके लिए मंज़ूर थीं। साहित्यकार उनकी आलोचना से डरते, इनको गंभीर न लेने की कोशिश करते, लेकिन वे अपनी कोशिशों में असफल रहे।

पहली बार मैंने विष्णुजी को जर्मनी में देखा। विख्यात जर्मन हिंदी के अनुवादक लोठार लुत्से (१९२७-२०१५) के साथ, हेइडेलबर्ग के दक्षिण एशिया संस्थान में। तीस साल पहले की बात। मैं खुद इंडोलोजी का मामूली छात्र था, कुछ नहीं था। समझदारी तब तक बहुत सीमित थी। अभी भी सीमित है, पर उन दिनों से थोड़ी बेहतर। उन दोनों महापुरुषों के सामने फिर भी अंदाज़ा हुआ कि हाँ, हिंदी साहित्य में कुछ है। अभी भी। इसे मैं आगे पढ़ना चाहता हूँ। जादू की बात थी। बिलकुल बाद में विष्णुजी से व्यक्तिगत रूप से मुलाक़ात हुई। कई बार संगोष्ठियों पर मिले, अपनी बात करने का मौक़ा मिला, बहुत प्रेम से और इत्मीनान से जवाब मिला। उनकी कोई भी उस्तादगिरी महसूस नहीं की। फिर २००७ में - जहाँ तक मुझे याद है - पूरी तरह से मुलाक़ात हुई। उस वक़्त तक दिल्ली के मयूर विहार में इनका घर था। खाना तो ज़रूर मिला, पर विष्णुजी ज़्यादातर बात करना चाहते थे मेरे साथ। हिंदी साहित्य में इनका ज्ञान अतुलनीय था। हिंदी के आधुनिक साहित्य १९वीं सदी से लेकर आज तक का एक जिन्दा खज़ाना था। और हर लेखक के साथ इनकी अपनी राय होती थी। वह न सिर्फ वही दुहराते थे जो कॉलेज बुक्स में लिखा है किसी लेखक पर। वैसे इनकी रायें बहुत सख्त भी हो सकती थीं। पर इसके साथ अपना फायदा नहीं ढूंढते थे और दूसरे पर अपनी राय थोपने की कोशिश नहीं करते थे। आसानी से तीन-चार घंटे तक इनके साथ बहस चल सकती थी।

विष्णु खरे की कविताओं का जर्मन अनुवाद, द्रौपदी प्रकाशन गृह, हेइडेलबर्ग, २००६ (अनुवादक : लोठार लुत्से)

वे मध्यप्रदेश के थे और कहते थे कि हमारी नसों में कुछ आदिवासी खून ज़रूर है। पहली बार जब इनके घर गया तो इन्होंने बरामदे में उगनेवाली बेलों को दिखाया। इसके साथ यही समझाते हुए बोलते थे। बहुत बड़ी होने लगी और इनको काटनी थी। दूसरा कोई रास्ता नहीं था। पर हमारी संस्कृति में एक पेड़ की शाखाओं को काटना ठीक नहीं माना जाता। फिर क्या करूँ? कुछ दिन तक ऐसे ही असमंजस में रहा। फिर एक दिन मैंने चुपचाप रात के अँधेरे में इधर-उधर कई शाखाओं को काटा ताकि पड़ोसियों को पता नहीं चले।

ऐसे थे विष्णुजी। संस्कार से बिलकुल हिन्दुस्तानी, पर बुद्धि पूरी दुनिया पहुँचती थी। बाद में मुंबई गए थे जहाँ इनके बच्चों के घर थे। वहां पिछली बार दो साल पहले मुलाक़ात हुई। इनकी बेटी भी साथ में थी। कहने लगे कि अभी साठ साल से लिखता रहा। ठीक है सो तो थी मेरी

ज़िन्दगी। दुनिया पसंद करे या नहीं। और हंसी के साथ कहने लगे कि लगता है कि आखिरी दम तक होती रहेगी। इस के साथ खुश थे।

जर्मन ज़ुबान में हिंदी साहित्य का अनुवाद करने में बहुत मदद देते थे। पहले लोठार लुत्से के साथ थे, बाद में मोनिका हॉर्स्टमैन के साथ। कुछ साल पहले आधुनिक हिंदी कविता का एक बहुत ज़बरदस्त संकलन निकला। बहुत महत्त्वपूर्ण है कि खासकर कविताओं के अनुवाद में भाषा में पकड़ हो। और वह है इसी संकलन में।

प्रगतिवादी ज़रूर थे। पर अपने संस्कार भी जानते थे। इनके पुस्तकालय में पूरी दुनिया का साहित्य सम्मिलित था और इनके सर में गूंज रहा था। न सिर्फ गूंज रहा था, इन की हिंदी की कविताओं में इनकी छवि उभर आती है।

हिंदी साहित्य के पक्के प्रेमी थे, उसी वक़्त हिंदी लेखन पर शिकायत बहुत करते थे। फिर भी हिंदी में लिखना ही पसंद करते थे, खासकर कविताएं। और जब हिंदी में लिखते थे तो न सिर्फ हिंदी साहित्य के इतिहास के बिम्ब-प्रतिबिम्ब सघन ढंग से सामने आते थे, पर जैसे कि पूरी दुनिया का साहित्यिक खज़ाना खुलता था। जर्मन साहित्य को खूब जानते थे। हमेशा कहते थे कि मेरी जर्मन ख़राब है, फिर भी पढ़ते थे जर्मन में और कभी कभी कुछ बोलते भी थे। और डच साहित्य भी जानते थे, अनुवाद भी करते थे डच-हिंदी, फ़िनलैंड का कलेवाला जानते थे, हिंदी में फिनलैण्ड के राष्ट्रीय आदिकाव्य का हिंदी रूपांतर लिखते थे। लैटिन अमेरिकन और आखिर में अंग्रेज़ी साहित्य की छवि भी इनकी कविताओं में खूब घुस गई है।

'कल और अवधि के दरमियान' की गद्य कविताओं का संकलन इन्होंने अपने प्रिय जर्मन दोस्त लोठार लुत्से को समर्पित किया। आवरण पर लुत्से की तस्वीर भी है। समर्पण में लिखते हैं कि लुत्से का 'हिंदी में ही सही मूल्याङ्कन नहीं हुआ।' वह विष्णुजी के बारे में भी कहा जा सकता है। ऐसे कुछ लेखक हैं जिनको अपनी ज़िन्दगी के दौरान ही पूरी तरह से आदर-सत्कार मिलता है। दूसरे किस्म के लेखक हैं जिनका मूल्य देहांत के बाद ही धीरे धीरे उभर आता है। विष्णुजी पहले किस्म के लेखकों में नहीं थे। देखा जाएगा कि दूसरे किस्म के दर्जे में आ रहे हैं।

२००८ में 'पाठान्तर' के नाम से इनका कविता संकलन सबसे ज़्यादा पसंद करता हूँ। इनकी कविताएं इस तरह से हैं कि बार-बार पढ़ने से इनका मतलब हमारे सामने आ ही रहा है। जैसे 'नींद में':

"कैसे मालूम कि जो नहीं रहा / उसकी मौत नींद में हुई? / कह दिया जाता है / कि वह सोते हुए शांति से चला गया /

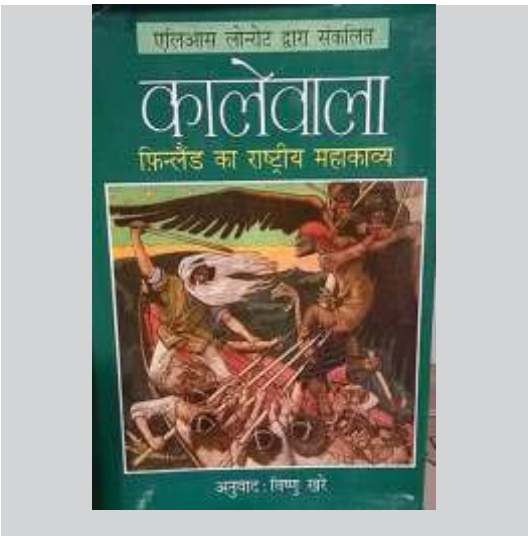

क्या साबुत है? / क्या कोई था उसके पास उस वक़्त?...' विष्णुजी चले गए, फिर भी अपनी कविताओं में हमारे साथ में होते ही रहेंगे।

विष्णु खरे - कविता संकलन 'लालटेन जलाना' से :

मृत्यु

ज़रूरी नहीं कि मृत्यु एक बार ही हो
और उसके बाद कुछ भी नहीं हो
एक अंधियारे अपार्थिव बरामदे के सिवाय
हो सकता है पहली बरसात के पश्चात
घास में बूँदें देखने के लिए तुम उठो
और खिड़की में लगे कांच में
तुम्हारा प्रतिबिम्ब तुम्हें आश्चर्यान्वित करने के लिए
वहां नहीं हो
या जब तुम चुम्बन के लिए होंठों को तत्पर करो
तो तुम्हें लगे कि तुम पास ही किसी कुर्सी पर बैठे
हंस रहे हो
या स्मृतियों के अलाव में झांकते हुए पाओ
कि उठती हुई लपटें तुम्हारी भौंह पर
कोई बू नहीं छोड़तीं
और जब तुम फुसफुसाहट की तरह
बिखरोगे हर शाम भीड़ में से
और लोग तुम्हारे बीच में से गुज़र जाएंगे
या तुम्हारे आर-पार आसानी से देख लेंगे
तो तुम्हें महसूस होगा
कितना हास्यास्पद है सोचना
कि मृत्यु एक सुविधा है
जो छायाओं के लम्बे हो जाने पर ही होती है। ■